

हमें परमेश्वर के वचन की आवश्यकता क्यों है?

परमेश्वर ने सदैव अपने वचन को अपने महान नाम से भी अधिक महत्त्व दिया है। इसलिए यह अत्यंत आवश्यक है कि हम भी उसके वचन को संपूर्ण निष्ठा और आदर के साथ सर्वोच्च स्थान दें। पर प्रश्न यह उठता है—परमेश्वर ने अपने वचन को स्वयं से भी अधिक महत्त्व क्यों दिया? यह वचन वास्तव में है क्या? यह कहाँ से आया? और क्यों है इस वचन को इतनी गहरी महत्ता?

इन सभी प्रश्नों के उत्तर जाने बिना हम यह नहीं समझ सकते कि हमें वचन की कितनी आवश्यकता है और क्यों है। तो आइए, इन गूढ़ प्रश्नों की गांठों को खोलने का प्रयास करें।

यूहन्ना 8:30-32 में लिखा है: “जब वह ये बातें कह ही रहा था, तो बहुतों ने उस पर विश्वास किया। तब यीशु ने उन यहूदियों से, जिन्होंने उस पर विश्वास किया था, कहा, ‘यदि तुम मेरे वचन में बने रहोगे, तो सचमुच मेरे चेले ठहरोगे; और तुम सत्य को जानोगे, और सत्य तुम्हें स्वतंत्र करेगा।’”

यीशु मसीह ने यहाँ स्पष्ट शब्दों में कहा कि केवल मुझ पर विश्वास कर लेने से ही कार्य पूर्ण नहीं होता। न ही इससे कोई स्वतः स्वतंत्र हो जाता है और न ही वह उसका चेला बन जाता है। उन्होंने कहा, “यदि तुम मेरे वचन में बने रहोगे” — यह ‘बने रहना’ मात्र एक बार का कार्य नहीं, बल्कि सतत, निरंतर चलने वाली प्रक्रिया है। यह जीवन के हर कार्य, व्यवहार, और चरित्र में वचन को जीने का आह्वान है। तभी हम वास्तव में उसके चेले कहलाएंगे, और तभी सच्ची स्वतंत्रता प्राप्त होगी।

कुछ लोग यह सोच सकते हैं कि जब हम यीशु को मान ही रहे हैं, तो उसके वचन को मानना या न मानना क्या फर्क डालता है? यह भ्रम उन्हीं को होता है जो वचन और परमेश्वर को अलग-अलग समझते हैं। जबकि बाइबिल कहती है — “**आदि में वचन था, वचन परमेश्वर के साथ था, और वचन ही परमेश्वर था।**” (यूहन्ना 1:1)

इसलिए हमें वचन और परमेश्वर को दो भिन्न दृष्टियों से नहीं देखना चाहिए। वे एक ही हैं। यही कारण है कि परमेश्वर ने अपने वचन को अपने नाम से भी अधिक महत्त्व दिया है, जैसा कि **भजन संहिता 138:1-2** में दाऊद कहता है: “मैं पूरे मन से तेरा धन्यवाद करूँगा; देवताओं के सामने भी मैं तेरा भजन गाऊँगा। मैं तेरे पवित्र मंदिर की ओर दण्डवत करूँगा, और तेरी करुणा और सच्चाई के कारण तेरे नाम का धन्यवाद करूँगा, क्योंकि तू ने अपने वचन को अपने बड़े नाम से अधिक महत्त्व दिया है।”

परमेश्वर का सामर्थ्य उसके वचन में प्रकट होता है। वह कभी निष्फल नहीं लौटता। यही संदेश **यशायाह 55:10-11** में मिलता है: “जिस प्रकार से वर्षा और हिम आकाश से गिरते हैं... उसी प्रकार मेरा वचन भी जो मेरे मुख से निकलता है, वह व्यर्थ मेरे पास न लौटेगा; परन्तु जो मेरी इच्छा है उसे वह पूरा करेगा।”

यदि हम उसके चेले बनना चाहते हैं, तो हमें उसके वचन में बने रहना होगा। यही कारण है कि परमेश्वर ने अपने वचन को अपने नाम से अधिक महत्त्व दिया है।

परन्तु यह भी कहना उचित नहीं होगा कि “जितना वचन है उतना ही परमेश्वर है” या कि “परमेश्वर वचन में सीमित है।” ऐसा नहीं है। **व्यवस्थाविवरण 29:29** में मूसा कहता है: “गुप्त बातें हमारे परमेश्वर यहोवा के वश में हैं; परन्तु जो प्रकट की गई हैं वे सदा के लिए हमारे और हमारे वंश के लिए हैं...” इससे स्पष्ट है कि अनगिनत बातें अब भी परमेश्वर के गूढ़ ज्ञान में सुरक्षित हैं, जिन्हें समझना हमारे लिए संभव नहीं है।

ऐसा ही अनुभव शमौन पतरस को हुआ जब उसने मसीह की दिव्यता को पहचाना और यीशु ने कहा: **मत्ती 16:17** — “हे शमौन योना के पुत्र, तू धन्य है; क्योंकि मांस और लोहू ने नहीं, परन्तु मेरे पिता ने जो स्वर्ग में है, यह बात तुझ पर प्रगट की है।”

वह परमेश्वर, जो गुप्त और प्रकट दोनों बातों पर अधिकार रखता है, एक बात को सदा हमारे सामने प्रकट देखना चाहता है—**उसका वचन।**

यशायाह 59:21 में वह स्वयं कहता है: “मेरा आत्मा तुझ पर ठहरा है, और मेरे वचन जो मैंने तेरे मुँह में डाले हैं, अब से लेकर सर्वदा तक वे तेरे मुँह से, और तेरे पुत्रों और पोतों के मुँह से भी कभी न हटेंगे।”

जब परमेश्वर स्वयं चाहता है कि उसका वचन हमारे मुख से कभी ना हटे, तो सोचिए वह कितनी महान और अनंत महत्ता रखता है! यह वही सामर्थ्य है जो हमें बुराई के बंधनों से मुक्त करता है और आत्मिक जीवन प्रदान करता है। यह कोई मानव रचित कथा नहीं, वरन् परमेश्वर के मुख से निकला हुआ जीवन है।

2 पतरस 1:21 में लिखा है:

“कोई भी भविष्यवाणी मनुष्य की इच्छा से कभी नहीं हुई, परन्तु भक्त जन पवित्र आत्मा के द्वारा उभारे जाकर परमेश्वर की ओर से बोलते थे।”

लेकिन केवल बोलने से बात सीमित हो सकती थी। इसलिए वचन को पीढ़ी दर पीढ़ी पहुँचाने के लिए इसे लिखित रूप में सुरक्षित किया गया। यह प्रेरणा और प्रकाशन, दोनों ही परमेश्वर की ओर से था।

2 तीमोथियुस 3:16 — “हर एक पवित्रशास्त्र परमेश्वर की प्रेरणा से रचा गया है, और उपदेश, और सुधार, और धर्म की शिक्षा के लिए लाभदायक है।”

भजन संहिता 119:130 में लिखा है:

“तेरी बातों के खुलने से प्रकाश होता है; उससे भोले लोग समझ प्राप्त करते हैं।”

परन्तु खेद की बात यह है कि कई विश्वासी वचन से अधिक अन्य बातों को महत्त्व देते हैं—पर्व, प्रथाएँ, रीति-रिवाज़ आदि। जब कि **कुलुस्सियों 2:16-17** हमें स्मरण कराता है:

“खाने-पीने या पर्व, या सब्तों के विषय में कोई तुम्हारा न्याय न करे, क्योंकि ये सब आने वाली बातों की छाया हैं, परन्तु वास्तविकता मसीह की है।”

आत्मिक विकास के लिए शरीर की नहीं, आत्मा की आवश्यकता है।

यूहन्ना 6:63 — “आत्मा जीवनदायक है, शरीर से कुछ लाभ नहीं। जो बातें मैं ने तुम से कहीं हैं, वे आत्मा हैं और जीवन भी हैं।”

यूहन्ना 3:5-6 —

“मैं तुझ से सच कहता हूँ, जब तक कोई जल और आत्मा से न जन्मे, वह परमेश्वर के राज्य में प्रवेश नहीं कर सकता। जो शरीर से जन्मा है, वह शरीर है; और जो आत्मा से जन्मा है, वह आत्मा है।”

कितनी सुंदर और स्पष्ट रीति से यीशु ने कहा—**“मेरी बातें ही आत्मा हैं और जीवन हैं।”**

और यही कारण है कि हमें परमेश्वर के वचन की आवश्यकता है।

अब आप स्वयं विचार कीजिए—क्या आप सचमुच आत्मा से जन्मे हैं? या आज भी आप वास्तविक वस्तु को छोड़कर केवल उसकी छाया को ही महत्त्व दे रहे हैं?

धन्य हैं हमारे येशु और धन्य है उनका प्रेम

Led by the Holy Spirit, Guided by Faith and Scripture

Biblical Commentary by Sonu Kumar Saha

Date: 5th April 2025

Contact: sks.officeuse@gmail.com

I sincerely thank our respected Guest Speaker, Rev. Shailendra Nanda, for teaching this topic so profoundly and clearly. His guidance has been a great blessing, enriching both my knowledge and faith. May God continue to bless him abundantly.

With gratitude,

Sonu Kumar Saha